दयाराम सतसई में केंद्रीय संवेदना प्रेमलक्षणा भक्ति

अध्येता: डॉ.रजनीकान्त एस.शाह

कविवर दयाराम की समस्त रचनाओं में सतसई को सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण माना गया है। एक हिंदीतर भाषाभाषी कवि की इस महत्त्वपूर्ण रचना का प्रथम सम्पादन गुर्जर कवि नर्मदजी ने 'दयाराम कृत काव्य-संग्रह' में गुजराती लिपि में किया था। अभी सन् 1968 में डॉ.अंबाशंकर नागर की विस्तृत भूमिका के साथ,उन्हीं के सम्पादन में दयाराम सतसई का प्रकाशन से बहुत बड़े अभाव की पूर्ति हुई है। गुजरात में सतसई की कोई सशक्त परंपरा नहीं है। अत: दयाराम ने हिन्दी साहित्य की सतसई परंपरा का ही अनुसरण किया है। दयाराम सतसई में सातसौ दोहों तथा एक सवैया का समावेश किया गया है। सतसई के आठ दोहे कवि के एक अन्य ग्रंथ 'कौतुक रत्नावली' से लिए गए हैं।

कवि ने ग्रंथ को प्रकरणों में विभाजित करने का कोई वैज्ञानिक आधार ग्रहण नहीं किया। 'संगवर्णन' और 'विवेक-शिक्षा' दोनों ही प्रसंगों में प्राय: नीतिपरक दोहों की बहुलता है। अत: दोनों प्रकरणों के दोहों का एक ही प्रकरण में समावेश किया जा सकता था।`भगवद् स्तुति' तथा भक्ति सम्बंधी दोहे प्राय: प्रत्येक प्रकरण में प्राप्त हो जाते हैं। ग्रंथ के अंत में कवि ने अपना परिचय देने के साथ ही ग्रंथ-रचना का उद्देश्य स्पष्ट किया है।

दयाराम ने अपने आराध्य के गुणगान करने के लिए इस ग्रंथ की रचना की है। कवि का विश्वास है कि भगवान श्रीकृष्ण के सम्बंध के बिना श्रेष्ठतम काव्य भी निरर्थक है,क्योंकि मुलम्मे के आभूषणों का कलात्मक सौन्दर्य उसके धातुगत मूल्य की अभिवृद्धि नहीं करता। फिर भी सतसई के बहुत से दोहे कवि की शुद्ध साहित्यिक अभिरुचि

के द्योतक हैं, लेकिन कवि है कि सतसई की टीका लिखते हुए प्रत्येक दोहे का सम्बंध अपने आराध्य देव श्रीकृष्ण के साथ जोड़ देता है। विषय की दृष्टि से सतसई को 3 भागों में विभाजित किया जा सकता है।– भक्ति, शृंगार और नीति कथन।

मंगलाचरण, भगवद्स्तुति, भक्ति प्रकरण नाम, महात्म्य आश्रय, तथा वाद प्रकरण में कवि की भक्ति भावना तथा दार्शनिक विचारों के दर्शन होते हैं। रूप-वर्णन तथा प्रेम और नायिका वर्णन सम्बंधी प्रकरण कवि की शृंगार भावना को अभिव्यक्त करते हैं। संग-वर्णन, विवेक-शिक्षा तथा प्रस्ताव प्रकरणों में अधिकांश रूप से कवि की नीति सम्बंधी उक्तियाँ हैं।

भक्ति: ग्रंथ के प्रारम्भ में कवि अपने गुरु श्री वल्लभाचार्य तथा श्रुति-मन-गो—धाम एवं अक्षरातीत भगवान श्रीकृष्ण की कृपापूर्ण दृष्टि के लिए प्रार्थना करते हैं। द्वितीय प्रकरण भी अपने आराध्य की प्रार्थना स्वरूप ही लिखा गया है। गोपी भाव से भक्ति करनेवाले कवि की आंतरिक दीनता तथा आत्म-भर्त्सना दर्शनीय है। अपने आराध्य की पतित पावनता तथा अकारण कृपालुता जैसे गुणों के प्रति कवि मुग्ध हैं। इसीलिए वह अपनी दुर्मति का वर्णन करता है कि अशरण-शरण भगवान अपनी पतित पावनता के कारण ही उसका उद्धार कर दें। उसे इस बात की बिलकुल आवश्यकता नहीं कि भगवान उसे अपना भक्त समझें। क्योंकि उस प्रभु ने अनेकों पापियों को यों ही तार दिया, यों ही उद्धार कर दिया। इसलिए वह भी उन पतितों की भांति ही उद्धार पा जाता है तो भी वह अपने को धन्य समझेगा। विज्ञप्ति – विलास' तथा कुछ अंशों में 'कौतुक रत्नावलि' के दोहों से भी इन दोहों का भाव-साम्य है।

भक्ति प्रकरण में भक्ति की सरलता,व्यापकता तथा महिमा का वर्णन किया है। शंकराचार्य के ज्ञान-मार्गियों का कवि पूर्णत: विरोधी है। वह उनको इस सम्बंध में इतना हीन समझता है कि विवाद करना तो अलग रहा, वह उनसे बात भी करना उचित नहीं समझता। वह कहता है, कि ज्ञानियों और भक्तों के लड़ने का समान धरातल ही नहीं है क्योंकि ज्ञानियों की अंतिम उपलब्धि मोक्ष है जब कि भक्तों को प्राप्य हैं स्वयं श्रीकृष्ण भगवान-

'ज्ञानी भक्त सों क्यों लरत बिना किए अनुमान
कृष्ण आप फल भक्ति के वहि मुक्ति को दान।'

भक्ति मार्ग सरल है। भक्त प्रभु की अनुकंपा का सहज अधिकारी है। कठिनतम यातनाओं को सहन करने के बावजूद ज्ञानियों को जो गति नहीं मिल सकी, वही शबरी आदि भक्तों को सुलभ हो गई। योग, प्राणायाम सबकुछ निरर्थक है। मनुष्य का उद्धार करनेवाला तो एकमात्र हरिनाम ही है। नाम महात्म्य प्रकरण में कवि ने इस बात का प्रतिपादन किया है। वैसे तो गिरधारी भाव के भूखे हैं परंतु भक्ति के प्रथम चरण में यदि कोई बिना किसी भाव विशेष के ही भगवान का नाम लेना शुरू कर दे तो भी उसका कल्याण अवश्य होगा क्योंकि अनिच्छापूर्वक भोजन करने पर भी भूख तो शांत होती ही है।`आश्रय' प्रकरण भगवान के अनुग्रह को व्यक्त करता है। भक्त को चाहिए कि सभी सांसारिक चिंताओं को छोड-छाडकर भगवान की शरण में चला जाए,क्योंकि भगवान जो भी करता है,वह सब भक्त के हित साधन के लिए ही करता है। यदि प्रभु की इच्छा कुछ और और मनुष्य की इच्छा कुछ और होगी यह निश्चित है कि मनुष्य प्रभु इच्छा के प्रतिकूल कुछ भी नहीं कर सकता।

इस विषय के तहत अंतिम प्रकरण है 'वाद-विवाद' का, जहाँ कवि शंकराचार्य के अनुयायियों के मत का खंडन करके अपने सिद्धांतों का प्रतिपादन करता है। वह 'एको हं बहु स्याम' जैसे श्रुतिवाक्यों को उनके समक्ष रखकर पूछ उठता है–

जो न रूप भगवान, क्यों संभव कर्तव्यता,

एकोहं बहु स्याम श्रुति निषेध करतन बने।

सतसई में व्यक्त भक्ति-भावना में प्रभु के प्रति कवि की अखंड आस्था का हर स्थल पर दर्शन होता है। वह यहाँ अत्यधिक दीन-हीन भक्त और प्रभु की करुणा का अकिंचन याचक मात्र है।

शृंगार-वर्णन: कवि का शृंगार-वर्णन उसकी प्रेमलक्षणा भक्ति का ही एक स्वरूप है। वस्तुत: उसकी सम्पूर्ण साधना का मेरुदंड ही प्रेम है। इसलिए सतसई में अवसर पाने पर कवि ने प्रेम के एक-एक पक्ष का वर्णन अत्यंत तन्मयता के साथ किया है। प्रेम की महत्ता, स्वरूप तथा स्वभाव सभी पर कवि अपने विचार प्रकट करता है। यह प्रेम आकाश की भांति नि:स्सीम चिंतामणि की भांति अमूल्य है। पर इस प्रेम की प्राप्ति का हरकोई अधिकारी नहीं हो सकता। जिसमें अपना तन-मन जलाने की क्षमता हो, वही प्रेम की राह पर प्रवृत्त हो सकता है। यह तो कागज की नाव पर सवार होकर समुद्र पार करने जैसा है।

इसीलिए कवि ने कहा है कि ज्ञानी और तपस्वी तो अगणित मिल सकते हैं पर सच्चा प्रेमी पा सकना बड़ा मुश्किल है। स्पष्ट ही है कि यहाँ कवि का संकेत लौकिक प्रेम की ओर नहीं है। वह तो उस प्रेम की बात करता है जो भगवान श्रीकृष्ण के साथ उसका सम्बंध स्थापित करता है।

गुजराती भाषा में तो यह प्रसिद्ध है कि 'दयाराम अर्थात् शृंगार का कवि।' (दयाराम एटले शृंगारनो कवि।')। हिन्दी के काव्य में भी

उसकी शृंगारिक भावनाओं में किसी प्रकार का अंतर नहीं आने पाया। कवि ने हिन्दी में एक उच्च आध्यात्मिक पृष्ठभूमि पर कृष्ण और राधा के विरह-मिलन के भावपूर्ण चित्रों का निर्माण किया है। शृंगार के क्षेत्र में कवि की कल्पना अत्यधिक सजीव और सुकुमार बन जाती है। दोहे जैसे लघु छंद में शृंगार विषयक युक्तियों की सफलता का आधार जीवन की मार्मिक परिस्थितियों का चुनाव भी है। कवि कहीं भी पाठक के लिए किसी भी क्लिष्ट कल्पना के लिए अवकाश नहीं छोड़ता। कवि की उक्तियाँ बहुत सरल और स्वाभाविक हैं। कवि की प्रकृति शृंगारिक है जरूर फिर भी वह अन्य भावों का सायास निषेध कर के शृंगार की प्रतिष्ठा नहीं करता। वन-पथ पर जाती हुई राधा यदि चपला की चमक और बादल की भयानक गर्जना से डर जाए तो वह स्वाभाविक ही है। तुलसी के राम का मन सीता की अनुपस्थिति में घमंडी घनों की गर्जना सुनकर डर गया था। पर इस प्रसंग में राधा का प्रिय पात्र तो साथ ही है,अतः उसे डरा हुआ देखकर जब सांत्वना देने के लिए उसके प्रिय श्रीकृष्ण उसे हृदय से लगा लेते हैं तो यह डर की आशंका स्वाभाविक सुख की खानि बन जाती है।

"चपला चमकी सघन गरजि सुनि डरि प्यारी जानि
लाल लाय लई हिय किसी बनी शंक सुख खानि॥"

वैसे तो शृंगार के सामान्य वर्णन में भी चपला का चमकना और घनों का गर्जना उद्दीपन वैभव के अंतर्गत आता है। इसलिए इस दोहे में कवि की प्रसंग योजना अत्यधिक भावोत्तेजक बन पड़ी है।

प्रेम का सच्चा स्वरूप वियोग की दशा में ही देखने को मिलता है। सैद्धान्तिक रूप में परम विरहासक्ति की दार्शनिक विचारधारा में विश्वास रखनेवाले कवि ने प्रेम की पीड़ा की मार्मिक व्यंजना की है।

वियोग मानजन्य भी होता है और प्रवासजन्य भी। मानजन्य वियोग का वर्णन करते हुए दयाराम ने
प्रवासजन्य वियोग को विस्तार प्रदान किया है। वियोग में नायिका द्वारा प्रिय की पाती को बिना पढे ही उसके भाव को समझ लेना,पाती के स्पर्श से विरहज्वाला का और भी तीव्र रूप धारण कर लेना आदि कुछ परंपरागत वर्णन भी है।

प्रेम और सौन्दर्य का अन्योन्याश्रित सम्बंध है। राधा के सौन्दर्य–वर्णन में दयाराम ने प्रचलित प्रतीक-योजना और वर्णन शैली को अपनाया है। बिना घूँघट पट डाले राधा का सरोवर पर चले जाना भौरों और चकोरों को परेशान कर देता है। वस्तुत: यहाँ सौन्दर्य के सजीव चित्रण के स्थान पर परंपरा प्रचलित उत्प्रेक्षा और रूपक आदि अलंकारों का चमत्कार ही अधिक दिखाई देता है। पाठक की कल्पना में रूप की मधुर चेतना जगाने में कवि असमर्थ रहता है।

नायिका-वर्णन: जिस युग में दयाराम ने अपनी सतसई की रचना की नायिका-वर्णन उस युग के कवियों का प्रिय विषय रहा है। हिन्दी में नायिका वर्णन की यह परंपरा कृष्ण भक्त कवियों से शुरू होती है। दयाराम की रुचि सम्पूर्ण वर्णन में मिलन-विरह की स्थितियों से उद्भुत नारी की मानसिक दशाओं का चित्रण करने की ओर रही है। रीतिकाल में सामान्यत: रीतिसिद्ध कवियों का नायिका वर्णन करने का यह ढंग था।

दयाराम ने मूल रूप में दो प्रकार की नायिकाओं –स्वकीया और परकीया के वर्णन तक ही अपना क्षेत्र मर्यादित रखा। उन्होंने इन दोनों प्रकार की नायिकाओ के कुल 28 भेदोपभेदों का वर्णन किया है। जिनमें 20 प्रमुख हैं। (१)प्रोषित्पतिका (२)विदग्धा (३)स्वयंदूतिका (४)असूया (अनुशायना) (५)खंडिता (६)कलहंतरिता

(७)उत्कंठिता (८)गर्विता (९)अभिसारिका (१०)ज्ञात-अज्ञातयौवना (११)स्वाधीनपतिका (१२)स्वकीया (१३)वासकसज्जा (१४)विप्रलब्धा (१५)प्रवस्त्पतिका (१६)आगमपतिका (१७)लक्षिता (१८)मुदिता (१९)मानवती और (२०)मुग्धा।

नायिका वर्णन में दयाराम का दृष्टिकोण परिगणनात्मक नहीं होकर भावनात्मक ही है। यही कारण है कि वे खंडिता आदि नायिकाओं की आंतरिक पीडा तथा विवशतापूर्ण घुटन के मार्मिक चित्र अंकित कर सके हैं। विदग्धा नायिकाओं की उक्तियों में भी वाणी-वक्रता के सुंदर उदाहरण दिखाई देते हैं। पर कहीं-कहीं वाक्-विदग्ध नायिकाएँ अपनी वाणी वक्रता से कामना के स्थूल संकेत देने लगती है।–

खरक संवारो कर भरे गोवर छुट उरछोर,
ऐहै वाद को बाल तुम, ढांकय नंदकिशोर।

यहाँ नायिका द्वारा बाल नंदकिशोर से छूती हुई कंचुकी बांधने का आग्रह, उसकी ढिठाई की ही व्यंजना अधिक करता है। पर यह स्थूलता सर्वत्र नहीं है।

दयाराम के नायिका वर्णन पर रीतिकाल का व्यापक प्रभाव है। उदाहरण के रूप में मिलने के किसी स्थल पर अनायास दुर्जनों के आ जाने पर नायक-नायिका के पीछे छिप गया किन्तु प्रिय का इतनी देर के लिए पीछे चले जाना नायिका को बेचैन कर देता है। अत: वह दर्पण की सहायता से पीछे छिपे नायक का दर्शन करने लगती है।–

सरके दुरिजन्न तें, ईठि रहे मो पीठ,
जकन परी बिन लखन मुख,मुकर मिस दे दीठ।

यहाँ नायिका की इस क्रिया विदग्धता पर वही लोग अस्वाभाविकता का दोष लगाएंगे जिन्हें रीति-कालीन नायिकाओं की प्रकृति का पर्याप्त ज्ञान नहीं होगा।

नीति कथन: सतसई का एक अंश नीतिकाव्य के अंतर्गत रखा जा सकता है। दयाराम ने कईं स्थानों पर सामाजिक तथा वैयक्तिक जीवन से संबन्धित विविध विषयों यथा भक्ति,धर्म,मित्रता-शत्रुता,सुख-दु:ख तथा हानि-लाभ को लक्ष्य में रखकर विविध नीति वाक्य कहे हैं।

इस प्रकार के काव्य की रचना का मूल उद्देश्य मानव की विवेक शक्ति को प्रबुद्ध करके उसके मन में नैतिक मूल्यों की चेतना जगाना ही है। यद्यपि नीतिकाव्य की रचना करने पर सामान्यत: कवि कवि न रहकर उपदेशक बन जाता है। फिर भी हिन्दी साहित्य में नीति काव्य की सशक्त ऐतिहासिक परंपरा है। अतिप्राचीन समय में कवियों ने अपने जीवनानुभवों के आधार पर सामाजिकों के हितार्थ कुछ विधि निषेध मूलक बातें कही हैं। यही बातें नीति का रूप धारण करके समाज में स्वीकृति प्राप्त करती रही। भक्त कवियों में तुलसीदास की नीतिपरक उक्तियाँ दीर्घकाल से जनजीवन को दिशा प्रदान करती आई हैं। रहीमदास के दोहे तो इस क्षेत्र में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण माने जा सकते हैं।

दयाराम सतसई के बहुत से नीतिवाक्य परंपरावलंबित होने के कारण उनके वैयक्तिक दृष्टिकोण को ही प्रकट करते हैं। नारी के चरित्र में मात्र अवगुणों के दर्शन करके उनसे दूर रहने का उपदेश भक्त कवियों के प्रचलित विश्वास का द्योतक है। पर जहाँ दयाराम ने स्वतंत्र रूप से जीवन की जटिलताओं का अध्ययन करके कुछ कहा है,वहाँ उनकी उक्तियाँ अधिक प्रभावोत्पादक हो सकी हैं। स्वानुभूतिपरक होने के कारण इस प्रकार के कथन अधिक गंभीर तथा हृदयग्राही बन पड़े हैं। यद्यपि दयाराम का जीवन एक भक्त का जीवन है। फिर भी उनसे जीवनानुभवों में वैविध्य और व्यापकता रही है। इसका कारण यह है कि उन्होंने स्वयं अपने जीवन में उतार-चढ़ाव देखे थे। विविध

परिस्थितियों से जूझकर उन्होंने अपने जीवन-पथ का निर्माण किया था। इसलिए उनकी उक्तियाँ जीवन की विस्तृत परिधि घेर लेती है।

दयाराम का दृष्टिकोण अधिकांश रूप में परंपरावादी है। वे वर्तमान जीवन के सुख-दु:ख को पूर्वजन्म के कर्मों का स्वाभाविक फल मानते हैं। इसलिए उनका मानना है कि उन कर्मों का भोग करना सब के लिए आवश्यक है।

'कियो भूत सो अब लह्यो,अब कृति आगे जानि।'

दु:खी को अपना दु:ख,भार हल्का करने के लिए और सुखी को अपना गर्व निवारण के लिए अपने से ज्यादा दु:खियों या सुखियों को देखकर शांतिपूर्वक अपना जन्म व्यतीत कर देना चाहिए।

सुख-दु:ख पचवन दोह को, ये ही है उपचार
अधिको लखिये आप तें, क्लेश गर्व संहार।

उनकी यह विचारधारा जीवन के मूलभूत प्रश्नों को बड़े ऊपरी तौर पर ग्रहण करके बड़े ऊपरी समाधान दे देती है।

वास्तविकता यह है, कि दयाराम का जीवन-काल में देश के सामाजिक,आर्थिक और राजनीतिक पतन का युग है। ऐसी दशा में स्वतंत्र चिंतन के आधार पर नवीन जीवन-मूल्यों का अन्वेषण कर पाते। उस युग में भारतीय जीवन को बल प्रदान करनेवाले आध्यात्मिक जीवन-मूल्यों में एक खोखलापन आ गया था। ऐसी स्थिति में उनका महत्त्व इस बात में है कि वे परंपरा प्रचलित जीवन-मूल्यों को सुरक्षित रखे रहे।

बिहारी ने अपने श्रीकृष्ण को आधुनिक दानी भी कहा था। पर उनकी तो यह अन्योक्ति ही थी। दयाराम ने कहा:

सहज विलोकत वदन छवि,लगत कलंक अमंद।
मनो भाए ब्रज चंद तुम नमी चौथ के चंद ।।

उक्त कथन में दयाराम के भक्त हृदय की आंतरिक टीस है। फिर भी विशिष्टता यह है कि इन्हीं चौथ के चंद्र श्रीकृष्ण को अपनी दार्शनिक विचारधारा को केंद्र-बिन्दु बनाकर दयाराम को सब कुछ कहना था। सतसई में अधिकांश रूप में दयाराम की नीतिपरक उक्तियाँ अन्योक्तियों के रूप में प्रकट हुई हैं।

काल-क्रम की दृष्टि से दयाराम रीतिकाल के कवि हैं। उनकी सतसई पर रीतिकाल

का प्रभाव सर्वाधिक दृष्टिगोचर होता है। ग्रंथ के अंतिम भाग में जिस चित्र-काव्य की रचना की गई है,वह भी तत्कालीन साहित्यिक संस्कारों का ही परिणाम है। शब्दालंकारों की भरमार तथा कूट पदों के रूप में कुछ दोहों की रचना के मूल में भी संभवत: युगधर्म की छाया ही है। सतसई के दो प्रकरण-हीरावेध तथा कठिण्यार्थ में दयाराम का ध्यान दोहों के ऊपरी रूप से से ही अधिक केन्द्रित रहा है। इन प्रकरणों में अधिकांश दोहों में मुद्रा और श्लेष जैसे अलंकारों का चमत्कार दर्शनीय है। मुद्रा अलंकार का उदाहरण:

मीन केतु रह कवि परयो,जीव बुद्धि गहि मंद।
मंगलमय तट तरनिजा,वसि न भजे ब्रज चंद।

यहाँ कवि खुद को संबोधित करते हुए कहता है- हे जीव,तू मंद बुद्धि होकर कामुकता के मार्ग में क्यों पड़ा है? तरनिजा के मंगलमय तट पर बसकर ब्रज-चंद्र की आराधना क्यों नहीं करता? पर यही दोहा नवग्रहों की नामगणना भी कराता है।-1.केतु, 2.राहु, 3.कवि-शुक्र, 4.जीव-गुरु, 5.मंद-शनि, 6.तरनि-रवि, 7.बुध, 8.मंगल तथा 9.चंद ।

इसी प्रकार निम्नांकित दोहे में श्लेष के द्वारा कवि ने गरुण तथा शशि दोनों की ही विशिष्टताओं का वर्णन कर दिया है-

खग सुरवाहन ईस विभु, हरि प्रिय रिपु सरिंग।

ऐसे हैं द्विजराज शुभ, कंचन वरन सुअंग ॥

यहाँ दयाराम के कूट-काव्य का भी उदाहरण दिया जाता है। 'मैं (कवि) श्रीकृष्ण का दास हूँ।' इस एक वाक्य को कहने के लिए उन्होंने कितनी बड़ी क्लिष्ट कल्पना की है-

बल्लभ सब संसार को, ता रासी की रासि।

ता रासी अरि अरि अरी,अरि पति के हम दास।

'सबका प्रिय सुख उसी की रासि कुम्भ,कुम्भ की मिथुन,मिथुन की सिंह,सिंह के शत्रु मेष,मेष के शत्रु वायु,वायु के शत्रु सर्प,सर्प के शत्रु गरुड तथा गरुडके पति (स्वामी) श्रीकृष्ण का मैं दास हूँ।'

दयाराम–सतसई का नायिका-वर्णन भी रीतिकाल से प्रभावित है। प्राय: सभी रीतिकालीन कवियों के लिए नायिका-वर्णन एक महत्त्वपूर्ण वर्ण्यविषय रहा है। अत: दयाराम जैसे भक्त कवि को विविध प्रकार की नायिकाओं को लक्ष्य में रखकर ही दोहों की रचना क्यों करनी पड़ी? इस प्रश्न का उत्तर रीतिकालीन हिन्दी कवियों की उक्त प्रवृत्तियों में खोजा जा सकता है। दयाराम ने अपने अन्य ग्रन्थों में भी कहीं न कहीं जाने-अनजाने रीतिकालीन कवियों की भांति ही खंडिता नायिकाओं का वर्णन किया है। यदि उनका सतसई ग्रंथ आद्यंत रीतिकालीन काव्य परंपरा का सचेष्ट रूप से निर्वाह करता हुआ प्रतीत होता है तो इसका कारण संभवत: यह है कि दयाराम ने बिहारी-सतसई को अपनी रचना का आधार बनाया था।

फिर भी दयाराम सतसई रीतिकालीन साहित्यिक मर्यादाओं के चौखटे में फिट नहीं बैठती। दयाराम सतसई की केंद्रीय संवेदना का आधार कवि की प्रेमलक्षणा मूलक भक्ति भावना है।

संदर्भ ग्रंथ:

1. दयाराम काव्य-संग्रह

2. हिन्दी साहित्य कोश

3. नाट्य-शास्त्र

4. दयाराम –सतसई : एक अनुशीलन- डॉ.महावीरसिंह चौहाण – डॉ. अम्बाशंकर नागर अभिनंदन ग्रंथ में प्रकाशित आलेख।

संपर्क: 2, 'शील-प्रिय',विमलनगर सोसायटी,नवाबजार,

करजण.जिला. वडोदरा.गुजरात.

पिन:391240. Mobile:9924567512. E.Mail Id: navkar1947@gmail.com